आचार्य विमर्शसागर पूजा

हे निस्पृह योगी चिदानंद रस का रसपान किया करते ।

चैतन्य चमत्कारी निधियाँ जग को तुम नित्यादिया करते ।

शुद्धोपयोग के आलम्बन में ही दिन रात बिताते हो ।

दुखिया जीवों का दुःख हरने शुभ उपयोगी बन जाते हो ।

शुद्धात्म तत्व ही एक सार, यह बात हृदय में समाई है ।

चैतन्य सुरभि से सुरभित जो, आतम की कली खिलाई है ।

निर्दोष श्रमण चर्चा पालन, लख जिन आगम का दर्श मिले ।

इस विषम काल में धन्य हैं हम जो ऐसे गुरु विमर्श मिले ।

ॐ हूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद्गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्र अत्रावतरावतर संवौषट् आवाहनं ।

ॐ हूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद्गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ हूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद्गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्र अत्र मम् सन्निहतो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

(परिपुष्पांजलिं क्षिपामः)

निज निर्मल ज्ञान सुधारस से भव्यों की प्यास बुझाते हो।

आरोग्य धाम निज आतम की चर्चा से याद दिलाते हो।

निज को पर्याय ही जान जान मैं जन्म मरण करता माया ।

निज पर्यायी का बोध हुआ, अब निर्मल जल चरणों लाया ।

ॐ हूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद् गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जग के सारे शीतल पदार्थ कुछ क्षण शीतलता देते हैं ।

पर गुरु मुख से जो वचन झरें भवताप स्वतः हर लेते हैं ।

निज स्वातम अनुभव का स्वामिन जो शीतल चंदन पाया है ।

तुम सी शीतलता पाने ये सन्तप्त हृदय अकुलाया है ।

ॐ ह्रूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद् गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामिति स्वाहा ।

भव भव से इस झूठे जग की ख्याति को ही अच्छा माना ।

निज आत्मख्याति के वैभव को गुरुवर न मैंने पहिचाना ।

निज आत्म रमणता का पौरुष पद व ख्याति की चाह नहीं ।

हे विभो आपको लख स्वातम पद बिन न कोई चाह रही ।

ॐ ह्रूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद् गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामिति स्वाहा ।

निष्काम स्वानुभव सुमनों से महका आतम का हर कोना ।

जो एक बार लखले इनको बस चाहे इन जैसा होना ।

निज ब्रह्म रमणता का चर्या हर पल जय घोष किया करती ।

ये वीतराग निर्ग्रंथ दशा निज ब्रह्म की याद दिया करती ।

ॐ ह्रूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद् गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

निज ध्यान अग्नि में नित आतम अनुभव पकवान पकाते हो ।

निज चिदानंद चैतन्य रसों में उनको नित्य पगाते हो ।

अध्यात्म रसों से जो पूरित भावों के व्यंजन लाया हूँ ।

जो भव भव में दुःख देती है, वह क्षुधा नशाने आया हूँ ।

ॐ ह्रूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद् गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

इस मोह महातम की काली छाया का जोर रहा अब तक ।

सम्यकदर्शन से दूर दूर मिथ्यातय ठौर रहा अब तक ।

सम्यक्त्व से भालोकित श्रद्धा का अनुपम दीप प्रकाशित हो ।

ये दीप समर्पित चरणों में मम् आतम भी अनुशासित हो ।

ॐ हूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद् गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुद्धात्म साधना महायज्ञ में कर्म जलाया करते हो ।

शुभ और अशुभ से आप दूर शुद्धोपयोग आचरते हो ।

इन द्रव्य भाव नो कर्मों को गुरुवर मैंने अपना माना ।

अव नाश करूँ इन कर्मों का मिल जाये सिद्धों सा बाना ।

ॐ हूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद् गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ और अशुभ के फल सुख दुःख उनमें ही मैं बहता आया ।

भव दुःख की असह वेदना को भव भव से मैं सहता आया ।

तेरी समता ने कर्मों के फल में समता सिखलाई है ।

शिवफल सुख रस से भरा हुआ, पाने की आस लगाई है ।

ॐ हूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद् गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुद्धात्म प्रदेशों में रमकर जग को बांटी चेतन मणियाँ ।

निज ज्ञान और श्रद्धान प्रखर टूटी कर्मों की हथकढ़ियाँ ।

खुद मूलाचार स्वयं बनकर चर्या गुरुवर साकार हुआ ।

पर से जितना सिमटे निज में उठना निज का विस्तार हुआ ।

हे नाथ अनर्घ्य स्वभावी हूँ उस अनर्घ्य पद का भान हुआ ।

गुरुवर तुमको जब से पाया, निज का पर का श्रद्धान हुआ ।

कलिकाल भी मानो धन्य हुआ जो ऐसे पावन संत मिले ।

गुरुवर विमर्श को पाकर के लगता जैसे अर्हत मिले ।

ॐ हूँ णमो आयरियाणं षट्त्रिंशद् गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

चर्या मूलाचार सी, समयसार सा ध्यान ।

हे निर्ग्रंथ महामुनी करो जगत कल्याण ।।

शुद्धातम तो अविनाशी है, ये जनम मरण न करता है ।

पर मातपिता का नाम तो वह, कोरा व्यवहार ही धरता है ।।

बचपन बीता, यौवन आया, सद् गुरुवर का सानिध्य मिला ।

पाकर निमित्त उस उपादान, में श्रद्धा का शुभ पुष्प खिला ।

निज शुद्धातम का ज्ञान हुआ, और स्वपर भेद विज्ञान हुआ ।

शुद्धातम के बिन न कोई, मेरा यह दृढ़ श्रद्धान हुआ ।।

घर द्वार तजा, परिवार तजा, तोड़े सब ममता के बंधन ।

निज आतम से रिस्ता जोड़ा, कर गुरु चरणों का स्पर्शन ।।

पंचाचारों का नित पालन, शुद्धात्मलीन नित श्रमणराज ।

भव्यों को भव से तार रहे बन कर गुरुवर अनुपम जहाज ।।

त्रय गुप्ति को अपनाकर के, अंतर से रिस्ता जोड़ा है ।

मन काय और वचनों का, झूठा वचनालाप भी छोड़ा है ।।

बाहर से पहना महाव्रतों का चोला, अजब निराला है ।

भूले भटके भ्रमते भवि को, शिवमारग देने वाला है ।।

निज आत्म रसिक हे मुक्ति पथिक, निज आतम में रमने वाले ।

स्वामिन ! शुद्धात्म प्रदेशों की, बगिया में ही थमने वाले ।

तुम पाँच इन्द्रियाँ जीत चुके, मनको वश में कर डाला है ।

शुद्धानम का पुरुषार्थ सदा, शुभ अशुभ टालने वाला है ।।

पंचेन्द्रिय विषय न छू पाते, गुरुवर तव चेतन परिणति को ।

हम भी वैसा पुरुषार्थ करें, जो आपसी निर्मल परिणति हो ।।

अध्यात्म सुगंधित उपवन से, निज अनुभव की चुन ली कलियाँ ।

शिवमार्ग चुना है दृढ़ता से सब छोड़ चतुर्गति की गलियाँ ।।

जब जब भी श्रीमुख को खोला, अध्यात्म प्रसून बरसते हैं ।

सुनने को वाणी भव्य जीव, पपीहे की तरह तरसते हैं ।

ये जहाँ जहाँ भी कदम पड़ें, वह माटी, चंदन बन जाती ।

जो भी श्री चरणों को छूले, वह आतम कुंदन बन जाती ।।

श्री चरणों यही प्रार्थना है, हमको भी निज जैसा करलो ।

चैतन्य सुधाकर की लहरों से कर्म कालिमा को हर लो ।।

ॐ हूँ षट्त्रिंशद् गुण सहित आचार्य विमर्शसागर मुनीन्द्राय पूर्णार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

अरिहंतों सा कर रहे, मोक्षमार्ग साकार ।

करुणा सागर आप हो, भव्यों के आधार ।।

(शान्तये शान्तिधारा, पुष्पांजलिं क्षिपामः)